IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 27, Issue 7, Series 1 (July. 2022) 67-71
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

जलवायु परिवर्तन के प्रति जागरुकता में समाजकार्य का हस्तक्षेप

डॉ० नेत्रपाल सिंह

डिपार्टमेंट ऑफ़ सोशियोलॉजी

मान्यवर कांशीराम गोवेर्मेंट डिग्री कॉलेज, गभाना (अलीगढ़)

सारांश
धरती के जन्म से लेकर अब तक के इतिहास ने लगभग साढ़े चार सौ करोड़ वर्षों में तपते हुए आग के गोले से लेकर हजारों वर्षों की सतत् बारिश, क्रमिक शीतलन और हिमाच्छादन तक को देखा है। यदि आग के गोले के रूप में धरती का जन्म और उसका शीतलन एक बार की घटना थी तो इसके तापमान में परिवर्तन, हिमयुगों का आना जाना एक चक्रीय प्रक्रिया है। यहाँ यह भी जानने योग्य है कि अनेक भूमंडलीय कारण, जैसे कि अल–नीनो और खगोलीय कारण, जैसे कि सूर्य बिबर और फ्लेयर्स भी जलवायु के परिवर्तन में आंशिक कारण हैं। परन्तु उस समय हुए जलवायु परिवर्तन और वर्तमान के जलवायु परिवर्तन में सबसे बड़ा अंतर है– मानवीय हस्तक्षेप। प्राचीनकाल के सारे परिवर्तन प्राकृतिक कारणों से शनैः–शनैः हुए थे और वर्तमान के घातक परिवर्तन समय के पैमाने पर आकस्मिक और मानवजनित हैं।

अगर हम पिछले 25–30 वर्षों को छोड़ दें, तो उसके पहले 'जलवायु' की चर्चा छोटे–बड़े क्षेत्रों के संदर्भ में ही की जाती थी। आमतौर पर किसी भी क्षेत्र में पाये जाने वाले मौसम को ही वहाँ की जलवायु कहा जाता है। जलवायु का सीधा–सादा अर्थ है कि चर्चित प्रदेश में सर्दी–गर्मी कितनी पड़ती है यानी तापमान कितना घटता–बढ़ता है, औसतन वर्षा कितनी होती है तथा विभिन्न ऋतुओं में हवा का रुख कैसा रहता है। किसी भी प्रदेश की जलवायु मुख्य रूप से वहाँ की भौगोलिक संरचना से नियंत्रित होती है किन्तु उस पर मानव की गतिविधियों का भी काफी प्रभाव पड़ता है।

अब तक हम जलवायु की चर्चा क्षेत्रीय सीमा तक ही करते थे। किसी प्रदेश में किसी वर्ष वर्षा औसत से कम हुई तो अकाल पड़ने की आशंका हो जाती थी। इसी तरह जब खेतों में पकाव और कटाई के निकट फसलें खड़ी हों और वैसे समय बेमौसम की बरसात हो जाए और ओले पड़ जायें तो व्यापक पैमाने पर फसल नष्ट होने का खतरा हो जाता है। अब जलवायु संबंधी हमारी चर्चायें और चिंता क्षेत्रीय सीमा से बाहर निकल कर वैश्विक हो चली हैं।

जलवायु पर गंभीर वैश्विक (ग्लोबल) चिंता का आरंभ आठवें दशक में वायुमण्डल में एक विकृति की खोज के साथ हुआ। बड़े पैमाने पर हो रहे औद्योगिक विकास से समूचे पर्यावरण के प्रदूषित होने की ओर सबसे पहले स्टॉकहोम में आयोजित विश्व सम्मेलन में ध्यान दिया गया और गहराई से विचार किया गया। यह सम्मेलन 1972 में हुआ जिसमें भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने प्रभावी ढंग से भाग लिया। उनके साथ वैज्ञानिक इंजीनियर स्व0 डॉ0 अनिल अग्रवाल ने भी सम्मेलन में भाग लिया था। डॉ0 अग्रवाल ने आगे चलकर पर्यावरण संरक्षण के लिए चली मुहिम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह वह समय था जब विभिन्न देशों–प्रदेशों की जलवायु में अनियमिततायें देखी जाने लगीं थीं। वैसे तो ऐसी अनियमिततायें भूतकाल में भी यदा–कदा होती रहतीं थीं। जैसे कभी कहीं सूखा पड़ जाने से अकाल हो जाता था तो कभी अत्यधिक वर्षा से विनाशकारी बाढ़ आ जाती, कभी बहुत अधिक गर्मी पड़ जाती तो कभी पारा शून्य के नीचे चला जाता। इसी संदर्भ में खोज–बीन करते हुए वैज्ञानिकों एवं पर्यावरणविदों का ध्यान पिछले कुछ दशकों से धीरे–धीरे पृथ्वी के बढ़ते हुए औसत तापमान की ओर गया। इस तथ्य में उन्हें ध्रुवों पर अधिक बर्फ पिघलने, अंटार्कटिक और आर्कटिक सागरों में छोटे–बड़े हिमखण्डों की संख्या में वृद्धि होने, दुनिया के कई भागों में ग्लेशियर्स के सिकुड़ने और इन सबके फलस्वरूप समुद्रों के जलस्तर में हो रही वृद्धि का कारण नजर आया।

यह उल्लेखनीय है कि उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में पश्चिमी देशों में जो औद्योगिक विकास हुआ, उसके दुष्परिणाम अब हमारे सामने दिख रहे हैं क्योंकि असंख्य औद्योगिक कारखानों से जो ग्रीनहाऊस गैसें निकलीं। वे वातावरण में संचित हो गई। कार्बन डाई आक्साइड इन बढ़ी ग्रीन हाऊस गैसों के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार हैं।

कृषि कार्य, लकड़ी, पेट्रोल, डीजल, कोयला, गैस, किरोसिन आदि के उपयोग से कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा ज्यादा निकलती है। तीन चीजें यहाँ घातक हैंः पहली, ज्यादा कार्बन वातावरण में संचित होने के कारण जलवायु परिवर्तन पहले ही हो चुका है अर्थात वर्षा की कमी से सूखा ज्यादा पड़ रहा है (अथवा राजस्थान जैसी मरूभूमि में कुछ वर्ष पहले अत्यधिक बाढ़ आई थी) और तापमान में वृद्धि हो गई है। इसके अलावा, तूफान, चक्रवात, सुनामी, वनों में आग लगने की घटनाओं में तेजी से वृद्धि हो रही है।

दूसरे, वर्तमान में ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन उस स्थिति को बदतर बनायेगा। तीसरे, भविष्य में यदि यही गति, दशा और दिशा रही तो वातावरण बहुत ज्यादा कुप्रभावित होगा।

यह सर्वविदित है कि धरती पर जितना जल उपलब्ध है उसमें मात्र 2.5% ताजा जल है और शेष खारा जल है जिसका उपयोग शोधन के बिना पीने या खेती या उद्योग के लिए नहीं किया जा सकता।

फिर इस ताजा जल में से 70% जमी बर्फ के रूप में है। इस प्रकार मानव उपयोग के लायक बहुत कम जल उपलब्ध है। दूसरी ओर जनसंख्या वृद्धि के कारण जल के उपयोग की मांग तेजी से बढ़ती जा रही है। इस ताजे जल का दो–तिहाई भाग हम कृषि कार्य हेतु करते हैं। दुनिया की आबादी 2050 तक 8.9 बिलियन होने का अनुमान है। ऐसे में जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापमान वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) से जल की समस्या विकराल हो जाएगी।

जनसंख्या वृद्धि के कारण आवास, कृषि, उद्योग, कार्यालय आदि के लिए अधिकतर तालाबों/झीलों/नदियों का स्वरूप बदल दिया गया। इसके फलस्वरूप, सतही जल का संचयन तेजी से बहुत कम हो गया। दूसरी ओर तापमान वृद्धि के कारण ग्लेशियर पिघल रहे हैं और इसके अलावा समुद्रों के थर्मल विस्तार के कारण समुद्री–स्तर में वृद्धि होना स्वाभाविक है। अन्तर–शासकीय ग्लोबल वार्मिंग पैनल के अनुसार सन् 2100 तक समुद्री जलस्तर में तेइस मीटर तक की वृद्धि हो सकती है। इसकी वजह से समुद्र के नजदीक बसे शहरों, गांवों और देशों में जल– प्लावन से तबाही मच जायेगी। कहने का मतलब है कि वहाँ की आबादी डूब जाएगी अथवा यही धीरे–धीरे जलस्तर बढ़ा तो निचले हिस्से के लोग ऊँचे/पहाड़ी हिस्सों में चले जाएंगे। बांग्लादेश जैसे देशों के लोग भागकर भारत आएंगे जहाँ पहले से लगभग दो करोड़ बांग्लादेशियों के होने का अनुमान है। इससे एक ओर कृषि भूमि, उद्योग, व्यवसाय, अस्पताल, शिक्षण संस्थान, दफ्तर, राष्ट्रीय धरोहर आदि का नामोनिशान मिट जाएगा, वहीं दूसरी ओर मार–काट (मांग अधिक आपूर्ति के कारण) बढ़ जाएगी।

पर्यावरण सरंक्षण एवं जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने हेतु अन्तरराष्ट्रीय प्रयास–

5 दिसम्बर, 1980 को 'संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा' ने 'पर्यावरण क्रियान्वयन परिषद' का विशेष सम्मेलन केन्या की राजधानी नैरोबी में मई (10–18) 1982 में आयोजित करने का निर्णय लिया। पर्यावरण एवं विकास के मुद्दों के पुनर्रीक्षण तथा उनके लिए प्रस्ताव सूत्रबद्ध करने के लिए पर्यावरण एवं विकास का विश्वव्यापी आयोग की स्थापना 1984 में हुई। प्रत्येक व्यक्ति ज्ञान के स्तर, ऐच्छिक संगठन, सरकारी कार्यों आदि का निर्धारण पर्यावरण के सापेक्ष करता है। मौसम वैज्ञानिकों ने 1985 में यह बात एक स्वर से कही कि अंटार्कटिका के ऊपर ओजोन की पर्त में छेद हो गया है। सितम्बर 1987 में मांट्रियल प्रोटोकॉल पर जब विभिन्न देशों ने हस्ताक्षर किये तो उन्होंने यह स्वीकार किया कि वातावरण में विषैली गैसों के फैलाव से ही ओजोन पर्त में क्षरण हुआ है। इस समझौते में एक निश्चित अवधि में इन गैसों के उत्सर्जन को कम करने का इरादा जाहिर किया गया था।

1988 में टोरण्टो (कनाडा) में आयोजित पर्यावरणीय सम्मेलन में एक प्रस्ताव पारित कर सभी देशों से कहा गया कि वे वर्ष 2005 तक कार्बन डाई ऑक्साइड के उत्सर्जन में स्वेच्छा से बीस प्रतिशत कटौती करें ताकि ग्रीन हाउस प्रभाव को कम किया जा सके। तत्पश्चात् 1992 में विश्व पर्यावरण सम्मेलन रियो द जिनेरो हुआ। जून (3–14) 1992 में ब्राजील के शहर रियो डि जेनेरिओ में हुए 'अर्थ समिट' या 'पृथ्वी सम्मेलन' में 172 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने पृथ्वी के तापमान में वृद्धि एवं जैव विविधता के संरक्षण आदि अत्यंत महत्वपूर्ण विषयों पर विचार किया।

वर्ष 1997 में 5 जून को 'द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन' का आयोजन डेनेवर में हुआ, जिसमें वर्ष 1992 में प्रथम 'पृथ्वी सम्मेलन' के दौरान लिए गए निर्णयों की समीक्षा की गई और यह पाया गया कि वांछित प्रगति नहीं हो पाई थी।

संयुक्त राष्ट्र की पहल पर जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए 'यूनाइटेड नेशंस फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज' अस्तित्व में आया। लगभग डेढ़ वर्ष के लंबे विचार–विमर्श के बाद जापान के क्योटो शहर में 11 दिसम्बर, 1997 को हुए यूएन एफसी सीसी के तीसरे सम्मेलन में क्योटो प्रोटोकॉल को स्वीकार किया गया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य वातावरण में हानिकारक गैसों की सान्द्रता की सीमा को नियंत्रित कर ग्लोबल वार्मिंग के खतरों को टालना था। 178 देशों ने जून, 2008 तक इस लक्ष्य के प्रथम चरण का आकलन 2010 में किया जाना सुनिश्चित किया।

23 जुलाई, 2001 में बॉन (जर्मनी) में सम्पन्न सातवें विश्व मौसम परिवर्तन सम्मेलन में एक शोध को प्रस्तुत करते हुए यह चिन्ता व्यक्त की गयी कि वैश्विक ताप वृद्धि के कारण विकासशील जगत की आधी से अधिक आबादी जो विश्व के 65 देशों में सिमटी है, उसे वर्ष 2010 तक 28 करोड़ टन खाद्यान्न उत्पादन से वंचित होना पड़ेगा। सितम्बर, 2002 में जोहांसबर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में दूसरे पृथ्वी सम्मेलन के नाम से चर्चित सतत् विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में 1992 में रियोडि जेनरो में हुए पृथ्वी सम्मेलन में लिए गये निर्णयों की प्रगति की समीक्षा की गयी। पर्यावरण की सुरक्षा करते हुए रियोडि जेनरो सम्मेलन में स्वीकार किये गये एजेंडा–21 पर भी इस सम्मेलन में बहस छिड़ी रही। सम्मेलन का प्रमुख उद्देश्य टिकाऊ विकास हासिल करना था। अक्टूबर, 2002 में नई दिल्ली में जलवायु परिवर्तन पर

संयुक्त राष्ट्र देशों का आठवां सम्मेलन (कोप–8) संपन्न हुआ। इसमें जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित अनेक बिन्दुओं पर चर्चा की गयी। विकासशील देशों की माँग के अनुरूप तकनीक हस्तांतरण, क्षमता, विकास और समयानुकूल बदलाव पर केन्द्रित जलवायु परिवर्तन एवं सतत् विकास सम्बन्धी घोषणा पत्र को इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया। इसमें पहली बार जलवायु परिवर्तन को सतत् विकास से जोड़ा गया।

उत्सर्जन में कमी लाने के लिए वर्ष 2002 में एक असाधारण दस्तावेज जारी किया गया है, जिसे 'बेलाजियो घोषणा–पत्र' कहा जाता है। इसमें दुनिया भर में मोटर वाहनों तथा यातायात ईंधनों के लिए नियामक सिद्धान्त दिये गये हैं।

दिसम्बर 2004 में कार्बन व्यवसाय के बारे में डरबन सम्मेलन तथा फरवरी 2005 में पुनः क्योटो सम्मेलन में हुए समझौते को अंतिम रूप देते हुए 2012 तक कार्बन डाइ आक्साइड उत्सर्जन को 1990 के स्तर तक लाने के बारे में सहमति बनी। इसी संदर्भ में 2007 में बाली समझौता भी हुआ। 17 नवम्बर, 2007 को जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्सरकारी दल–आईपीसीसी ने अपनी रिपोर्ट को स्पेन के वैलेसिया में स्वीकृति प्रदान की। आईपीसीसी की यह रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र महासचिव बान की–मून को सौंपी गई, बान की–मून ने इसे दिसम्बर, 2007 में बाली में सम्पन्न अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में औपचारिक रूप से प्रस्तुत किया।

उल्लेखनीय है कि भारत के आर0के0 पचौरी की अध्यक्षता वाले आईपीसीसी को ही वर्ष 2007 का नोबेल शान्ति पुरस्कार अमेरिका के पूर्व उपराष्ट्रपति के साथ संयुक्त रूप से प्रदान किया गया है।

जुलाई, 2009 में इटली में आयोजित औद्योगिक देशों के समूह 'जी–8' के शिखर सम्मेलन में जी–8 एवं विकासशील देशों के समूह जी–5 ग्लोबल वार्मिंग पर सर्वसम्मति से दस्तावेज जारी करने पर सहमत हो गए, परंतु ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन को 2050 तक घटाकर आधा करने के लक्ष्यों को तय नहीं किया जा सका। ग्लोबल वार्मिंग के नियंत्रण की दिशा में एक महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन 7–18 दिसंबर, 2009 में कोपेनहेगन में आयोजित किया गया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य बाली कार्य योजना का क्रियान्वयन तथा क्योटो प्रोटोकॉल की दूसरी प्रतिबद्धता अवधि के संबंध में निर्णय लेना था।

इसरो के स्पेस एप्लिकेशन सेंटर अहमदाबाद के वैज्ञानिकों और जाने माने पारिस्थितिकी विज्ञानी प्रो0 एस0पी0 सिंह के संयुक्त शोध के निष्कर्ष कहते है कि पिछले पांच दशकों से हिमालय की जलवायु में जारी बदलाव यदि इसी रफ्तार से जारी रहा तो बहुत संभव है कि आने वाले समय में दुनिया की सबसे ऊँची चोटी एवरेस्ट पर भी पेड़ उगने लगें।

मध्य हिमालय के ऊँचाई वाले क्षेत्रों के टेंपोरल सेटेलाइट रिमोट सेंसिंग डाटा के अध्ययन से पता चला है कि 1960 में जहाँ नंदादेवी बायोस्फेयर रिजर्व के 15 प्रतिशत भूभाग में ग्लेशियर, 38 फीसदी में बर्फ और 44 फीसदी क्षेत्र में चट्टानों का मलबा था जबकि वनस्पति के रूप में छिटपुट छोटी झाड़ियाँ थीं। मार्च 1986 तक इसमें बदलाव आया और 1.4 वर्ग किमी क्षेत्र में वनस्पतियाँ दिखने लगीं।

लेकिन 1999 में तस्वीर काफी बदल गई। बर्फ कम हो गई, चट्टानों का मलबा बढ़ गया। 2004 आते आते वनस्पति ने बर्फ से लकदक इस इलाके में 60 वर्ग किलोमीटर का इलाका हथिया लिया। 1986 में जहाँ वनस्पति क्षेत्र महज एक फीसदी था। 18 साल बाद यानी 2004 में वह 22 फीसदी तक पहुँच गया। बर्फीले ग्लेशियर का इलाका भी नब्बे फीसदी से घटकर 35 फीसदी ही रह गया। इतना ही नहीं, 1986 तक जहाँ 3900 मीटर से ज्यादा ऊँचाई पर ही इमारती लकड़ी वाले पेड़ उगते थे, 2004 तक वे 4300 मीटर की ऊँचाई पर भी उगने लगे।

जाने–माने पर्यावरणविद् डॉ0 राजेन्द्र पचौरी द्वारा मारीशस में आयोजित कांफ्रेंस में प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट के अनुसार अगले दस सालों में भीषण प्राकृतिक आपदाओं का एक चक्र शुरु होने की आशंका है। खेती का विनाश, पानी का भारी संकट, अकाल, समुद्र के स्तर में वृद्धि, आपदाएँ मानव सभ्यता को भारी क्षति पहुँचाएँगी। यानी अभी तक जो हुआ है, वह सिर्फ संकेत भर है और बुरे वक्त की उल्टी गिनती शुरु हो चुकी है।

अमेरिका स्थित नेशनल सेंटर फॉर एटमॉसफेरिक रिसर्च के वैज्ञानिक गेराल्ड मील और उनके साथियों ने ग्लोबल क्लाइमेट के दो कम्प्यूटर मॉडल बनाए हैं। इनकी सहायता से वे भविष्य के विभिन्न परिदृश्यों की रूपरेखा बना सकते हैं। उनके अनुसार अगर ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को घटाकर सन् दो हजार के स्तर पर पहुँचा दिया जाए तो भी थर्मल इनर्शिया के कारण समुद्र के स्तर में वृद्धि जारी रहेगी और अगली सदी के अंत तक समुद्र का स्तर तकरीबन 11 सेंटीमीटर ऊपर उठ जाएगा।

इंटरनेशनल पैनल आन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) की रिपोर्ट में कहा गया है कि अगर हमने अपनी जीवन शैली नहीं बदली, कार्बन डाई ऑक्साइड का उत्सर्जन यूं ही जारी रहा तो परिणाम भयावह होंगे। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के कार्यकारी निदेशक एचिम स्टिनेर के अनुसार ''आज के हालात में वैश्विक तापमान में आगामी कुछ दशकों में 2 से 3 डिग्री के बीच वृद्धि संभावित है, यदि इसे नहीं रोका गया तो धरती पर विनाशक परिवर्तनों का सिलसिला इतना तीव्र होगा कि फिर संभलना कठिन होगा।''

मिलेनियम इकोसिस्टम एसेसमेंट (एम0ए0) के मुखिया और विश्व बैंक के चीफ साइंटिस्ट रॉबर्ट वाटसन के अनुसार, ''हमारा भविष्य हमारे ही हाथ है। पर दुर्भाग्य से हमारा बढ़ता लालच, भावी पीढ़ियों के लिए कुछ भी छोड़कर नही जाने देगा।'' रिपोर्ट में कहा गया है कि इंसान का प्रकृति के अनियोजित दोहन के सिलसिले में यह दखल इतना ज्यादा है कि पृथ्वी पिछले 50 वर्षों में ही इतनी ज्यादा बदल गई है जितनी कि मानव इतिहास के किसी काल में नही बदली। आधी शताब्दी में ही पृथ्वी के अंधाधुंध दोहन के कारण पारिस्थितिकी तंत्र का दो–तिहाई हिस्सा नष्ट हो गया है।

आज मनुष्य में इतनी क्षमता आ गई है कि कुछ समय के लिए, कुछ स्थान विशेष की परिस्थिति बदल सकते हैं। यही कुछ–कुछ का विस्तार होते हुए प्रकृति का दोहन होने लगता है जो जलवायु परिवर्तन का कारण बन जाता है। हमें आज सजग होना होगा क्योंकि कहावत भी है Prevention is better than cure अर्थात् बीमारी आने से पहले ही सुरक्षात्मक उपाय कर लें तो बेहतर है, क्योंकि एक पीढ़ी के व्यक्ति दूसरी पीढ़ी का स्थान ले लेते हैं, लेकिन मनुष्यों द्वारा बर्बाद की गई भूमि या प्राकृतिक संसाधन फिर नहीं आ सकता। इसलिए आपके ग्रह (विश्व) को आपकी जरूरत है। विकास अच्छी बात है। लेकिन यह भी जानना चाहिए कि अत्यधिक विकास, 'विनाश' की ओर ले जाता है। हम अमीबा से जीव, जीव से आदमी, आदमी से इंसान, इंसान से बेहतर इंसान तथा आज सुपर फास्ट इंसान बनने के चक्कर में अपने आस–पास के प्राकृतिक संसाधनों का दुरूपयोग कर रहे हैं।

अध्ययन की आवश्यकता– भारत कृषि प्रधान देश है। जलवायु परिवर्तन का भयावह असर हमारे देश की अर्थव्यवस्था पर पड़ रहा है। हमारे देश में प्राकृतिक संसाधनों, विशेषकर वनस्पतियों एवं जीव–जंतुओं की विशाल धरोहर है तथा भारत का जैव–विविधता के क्षेत्र में पूरे विश्व में एक महत्वपूर्ण स्थान है। इस विविधता के संरक्षण हेतु हमें राष्ट्रीय स्तर पर जलवायु में हो रहे परिवर्तन के संबंध में अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रयास करने होंगे। वैज्ञानिकों के अनुसार अगर हम बिना समय गवाएं इस दिशा में कुछ करना शुरु कर दें तो इस संकट को पूरी तरह खत्म तो नहीं किया जा सकता, लेकिन कुछ हद तक सीमित अवश्य किया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि ऊर्जा के लिए प्रदूषण रहित नए उपाय विकसित किए जाएं और इसके लिए रिसर्च पर और अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाए। वरना बाद में वही बात होगी कि अब पछताए होत क्या ....।

इन्हीं तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी प्रस्तावित शोध अध्ययन में जनसामान्य में जलवायु परिवर्तन के प्रति जागरुकता का अध्ययन करने तथा समाजकार्य हस्तक्षेप द्वारा उनमें जलवायु परिवर्तन के प्रति जागरुकता, मनोवृत्ति एवं व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. **आर्या, एस0पी0,** सामाजिक सर्वेक्षण की पद्धतियां, साहित्य भवन, आगरा
2. **एकॉफ, आर.एल.,** दि डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्च, दि यूनीवसिर्टी ऑफ शिकागों प्रेस, 1953.
3. **बन्दोपाध्याय,** इण्डियाज इनवायरमेन्ट क्राइसिस एण्ड रिस्पान्सेस, नई दिल्ली, 1986
4. **बहुगुणा, सुन्दरलाल,** पर्यावरण और विकास, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1997
5. **गुप्ता एम0एल0 और शर्मा डी0डी0,** सामाजिक अनुसंधान एवं शोध साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 1998।
6. **गोयल, एम0के0,** अपना पर्यावरण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1995
7. **गोयल, एम0के0,** पर्यावरण शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 2004–05
8. **गुप्ता, बी0एस0,** इनवायरमेन्टल अवेयरनेस एण्ड मॉस मीडिया, विन्दुरा
9. **कुलश्रेष्ठ, नीलम,** ''हराभरा रहे पृथ्वी का पर्यावरण'' सामयिक प्रकाशन.
10. **कुमार, प्रदीप,** ''पर्यावरण प्रदूषण'', डिस्कवरी पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, 2007.
11. **मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ,** सामाजिक सर्वेक्षण व शोध, सरस्वती भवन, नई दिल्ली
12. **मोहन, आई0,** इनवानैमेण्टल पलूशन एण्ड मैनेजमेंट, एशिया पब्लिशिंग हाउस, न्यू दिल्ली, 1989
13. **प्रतिवेदन तथा लेख**
14. काकाती, ''जलवायु मुद्दे का जिम्मा'' **जर्नल स्पेन** मार्च, अप्रैल 2008, 2009
15. **पर्यावरण (डाइजेस्ट),** पर्यावरण पर राष्ट्रीय हिन्दी मासिक (2005)
16. राकेश त्रिवेदी, पर्यावरणविद्, ''धरती पर बढता संकट'' **नई दुनिया,** समाचार पत्र, 27 अप्रैल 2007
17. द डे आफ्टर टूमारोः इम्पैक्ट ऑफ क्लाइमेट चेंज ऑन द वर्ल्ड्स वाटर, डा. प्रदीप्तो घोष, **टेराग्रीन,** 2008.
18. चन्द्रशेखर दासगुप्ता शिफ्ट्स ऑन क्लाइमेट चेंज, **द टेलीग्राफ**, कलकत्ता, 2 सितम्बर, 2008.

19. कोपिंग विद क्लाइमेट चेंजः गौतम दत्त एण्ड फैबिना गैओली, **इकॉनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,** 20 अक्तूबर, 2007.
20. इफेक्ट ऑफ ग्लोबल वार्मिंग ऑन क्रॉप प्रोडक्टिविटी, वाई.एस. शिवाय एण्ड अंशु राहुल, **कुरूक्षेत्र,** जुलाई, 2008.
21. सांगल, पी.पी., इंडियाज़ क्लाइमेट चेंज एक्शन–प्लान, **द इकॉनॉमिक टाइम्स,** नई दिल्ली, 29 जुलाई, 2008.
22. एन एसेसमेन्ट ऑफ द इण्टरगवर्नमैण्टल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज, **क्लाइमेट चेंज,** 2007; सिंथेसिस रिपोर्ट.